औरत पर्दे की आग़ोश में

कनीज़ महदी काज़मी, जामेअतुज़्ज़हरा

तारीख़ गवाह है कि जितनी अहमिय्यत इस्लाम ने औरत को दी है उतनी किसी भी अदियाने दुनिया ने नहीं दी और यह मुशाहेदे की बात है कि इन्सान की निगाह में जिस चीज़ की क़द्र व क़ीमत जितनी होगी उतनी ही उसकी हिफ़ाज़त का इन्तिज़ाम करता है, चाहे अपनी जान ज़रर में आ जाए लेकिन इस चीज़ को ज़रर में नहीं आने देता इसी तरह निगाहे माबूद में औरत की अज़मत इस क़द्र बुलन्द व बाला है इसकी मुहाफिज़त के लिए पर्दा क़रार दिया बल्कि क़रार ही नहीं दिया वाजिब कहा है और हर साहेबे अक़्ल इस बात को क़बूल करता है।

वाजिब उस काम को कहते हैं जिसमें मुकम्मल तौर से फायदा हो ज़रर और कोई नुक़सान न हो और अगर उसको छोड़ दिया जाए तो ज़रर का सामना करना पड़ेगा बस इसी तरह खुदावन्दे आलम ने औरत पर पर्दा वाजिब क़रार दिया इसमें औरत की मुकम्मल तौर से मुहाफिज़त है अगर उसको तर्क कर देगीं तो नाकाम रहेगी और उसकी कोई हक़ीक़त नही होगी अगरचे पर्दा एक छोटा सा लफ़्ज़ है लेकिन औरत के लिए यह उतना ही ख़ास मक़ाम रखता है जितना शार्गिद के लिए उस्ताद, फूल के लिए खुश्बू, अन्धेरे में रोशनी, परेशानी के वक़्त मददगार, अन्धे के लिए सहारा, औलाद के लिए वालदैन।

शायद यह तो मुमकिन हो लेकिन पर्दे के बग़ैर आज कल के माहोल में ज़िन्दगी गुज़ारना बड़ा मुशकिल है बिलकुल उसी तरह से जैसे :–

जिस्म है रूह नहीं है, फूल है खुश्बू नहीं, हिदायत देने वाले हैं पैरवी करने वाले नहीं, मस्जिद हो नमाज़ पढ़ने वाले नहीं, काबा हो तवाफ करने वाला नहीं।

लेकिन लोगों ने पर्दे को ज़ुल्म तसव्वुर कर लिया है क़ैद ख़ाना समझ लिया है लोग कहते हैं पर्दे ने औरत की आज़ादी सल्ब कर ली है पर्दे में रह कर औरत किसी काम को अन्जाम नहीं दे सकती पर्दे से औरत की ज़िन्दगी का मक़सद बेकार हो जाता है।

पर्देदार के बारे में यह भी तसव्वुर किया जाता है कि पर्देदार औरत दुनिया का कारोबार नहीं कर सकती और पर्दा करने से वह एक अज़्वे मुअत्तल होकर रह जाती है।

यह बात ग़लत है इसलिए कि इस्लाम की तारीख़ ही एक पर्देदार ख़ातून की तिजारत से शुरु हुई है लिहाज़ा इस्लाम इस बात को किस तरह क़बूल कर सकता है कि पर्देदार औरत तिजारत नहीं कर सकती है इस्लाम इस राह में हायल नहीं होता अलबत्ता इस्लाम इस बात की इजाज़त नहीं देता कि माल के कारोबार को वसीला बनाकर इज़्ज़त व आबरू का कारोबार शुरु कर दिया जाए।

मुआशरे में पर्दे की बात तो अलग है वह तो अक़्ल व फितरते सलीम का तक़ाज़ा है इस्लाम ने इस वक़्त भी पर्दे का ख़याल रखा है जब औरत तनहाई में बन्द कमरे में अपने परवरदिगार की बारगाह में खड़ी होती है और नमाज़ अदा करना चाहती है और इस्लाम इससे मुतालबा करता है कि मुकम्मल हिजाब के साथ मुसल्ले पर आये और हरगिज़ कोई जिस्म का ग़ैर ज़रूरी हिस्सा खुलने न पाये ताकि औरत को यह एहसास पैदा हो कि पर्दा ज़रूरते ख़तरात से बचाने का ज़रिया नहीं है बल्कि इज़्ज़त व करामत व शराफत व हशमत में इज़ाफे का ज़रिया भी है और परवरदिगार इस पर्दे के ज़रिये उसे अज़मत ही देना चाहता है इसकी इज़्ज़त व अज़मत को कम नहीं करना चाहता है पर्दा औरत का ख़ूबसूरत केस (Case) है।

इन्सान ज़मीन पर रखे सामान को नज़र अन्दाज़ कर देता है सब जानते हैं अच्छी खूबसूरत क़ीमती चीज़ को छुपाकर शीशे में रखा जाता है शीशे में रखी चीज़ की तरफ सब बढ़ते हैं इसी तरह औरत है इसका शीशा पर्दा है कि अगर वह पर्दे में है तो साहेबे इज़्ज़त व तकरीम है लेकिन अगर बेपर्दा है तो हर इन्सान ज़मीन पर पड़े सामान की तरह ठोकर मार कर आगे बढ़ जायेगा।

लेकिन बदक़िस्मती यह है कि इस दौर की औरतें खुद इस बात को सोचती है कि औरत पर्दे में रहकर मजबूर हो जाती है और बेबस हो जाती है जबकि ऐसा नहीं है। तो इन औरतों के लिए जीती जागती मिसाल जनाब फातमा ज़ेहरा (अ0) हैं कि उन्होंने पर्दे में रहकर अपना हक़ तलब किया, पर्दे में रहकर बच्चों की लाजवाब परवरिश की, पर्दे में रहकर ओहद में पैग़म्बर (स0) की मदद की जबकि जनाब फातमा के दौर में ज़ाते औरत से ही नफरत की जाती थी लेकिन आज के दौर में औरत को 100 प्रतिशत जीने का हक़ है।

आज के ज़माने की एक ख़ास बात व खुसूसियत यह है कि आज कल जब पर्दे की दावत दी जाती है तो लोग एक जवाब देते हैं कि पर्दा करने की ज़रूरत क्या है? आँख़ और दिल तो पाक हैं।

मैं उनके जवाब में कहूँगी कि शैतान तो हमेशा साथ रहता है जब वह जनाबे आदम को बहका सकता है तो बन्दए मआसी व गुनाहगार किस तरह दावा कर सकते हैं कि शैतान हमको नहीं बहका सकता।

अबु अब्दुल्लाह (अ0) फरमाते हैं:– ''नामहरम की तरफ निगाह करना शैतान की तरफ से फेंका हुआ तीर है और कितनी निगाहें ऐसी हैं जिनकी हसरतें तवील हो जाती हैं।''

लेकिन अगर औरत पर्दे में रहे तो यह नौबत ही नहीं पहुँचेगी कि शैतान की तरफ से तीर आये। (फिर किसी की हसरतें भी तवील न होंगी।)

बेपर्दा रहना शैतान का फेंका हुआ एक तीर है जब औरत बेपर्दा रहती है तो मुआशरा में फसाद बरपा हो जाता है। इसी बिना पर खुदा ने पर्दे का वाजिब क़रार दिया है। औरत सिर्फ पर्दे की आग़ोश में खूबसूरत व बेहतर लगती है जिस तरह कोई फुलवारी गुलदान में अच्छी लगती है उसी तरह औरत पर्दे की आग़ोश में अच्छी लगती है।

बस रब्बे करीम से हमारी दुआ यही है कि हमको भी शहज़ादी–ए–कौनैन की तरह ज़िन्दगी गुज़ारने की तौफीक़ अता फरमाए। और तमाम जहान की औरतों को शैतानी वसवसे से दूर रखे उनके हिजाब (पर्दे) को महफूज़ रखे और जो बेहिजाब है उनको हिजाब करने की तौफीक़ अता फरमाए।

बक़िया जिहादे फातिमा (अ0)..................

ज़िन्दगी तवील जिहाद से मअमूर (भरी पुरी) है। फातिमा (स0) के सिवा कोई ख़ातून नहीं जो रसूल (स0) के बाद आने वाले ज़माने में मुसलमान ख़्वातीन के लिये नमून–ए–अमल बन सके। दुख़्तरे रसूल (स0) ने बेटी बनकर, बीवी बनकर, और माँ बनकर हर किरदार को अज़मत अता कर दी। आप ने बता दिया कि औरत सिर्फ़ सिन्फे नाजुक ही नहीं बल्कि वक़्त पड़ने पर बातिल ताक़तों के लिये कारी ज़रब (सख़्त चोट पहुँचाने वाली) भी बन सकती है।

दुनिया का हर बड़ा इन्सान एक अज़ीम आग़ोश में परवरिश पाता है। इस मुख़्तसर सी गुफ्तगू को इस पैग़ाम पर ख़त्म करना चाहता हूँ कि ऐ फातिमा ज़हरा (स0) से मुहब्बत करने वाली बीबियों तुम बेटी हो, बहन हो, ज़ौजा या माँ हो, हर रिश्ता अज़ीम रिश्ता है यह तमाम रिश्ते मुहब्बतों के रिश्ते हैं। लेकिन वक़्त पड़ने पर इन तमाम मुहब्बतों को दीन पर कैसे निछावर किया जाता है यह दुख़्तरे रसूल (स0) से सीखो। आग़ोशे ज़हरा (स0) की तरबियत का असर कर्बला में देखो। किस तरह हुसैन (अ0) और ज़ैनब (स0) ने तमाम मुहब्बतों को नाना के दीन पर निछावर कर दिया। खुदाया! हमें तैफीक़ दे कि हम मादरे हुसैन (अ0) के जिहाद को समझ सकें। और पैग़ाम सुन सकें।

ऐ जबीने मुस्तफा यह तो बता
कितने सिज्दों का सिला है फातिमा (स0)